महोपाध्याय क्षमाकल्याण जी रचित साहित्य

मणिगुरु चरणरज आर्य मेहुलप्रभसागर

भारत की संस्कृति के विकास व ऊर्ध्वीकरण में जैन धर्मावलंबियों का विशेष योगदान रहा है। जिन्होंने संस्कृति की रक्षा-संवर्धन-उत्कर्ष हेतु विभिन्न साहित्य का सृजन कर विश्व को अमूल्य विरासत दी है । आचार्य हरिभद्रसूरि, जिनेश्वरसूरि, नवांगी टीकाकार अभयदेवसूरि, जिनवल्लभसूरि, जिनदत्तसूरि, हेमचंद्रसूरि, जिनपतिसूरि, महोपाध्याय समयसुंदरजी, प्रौढ़ द्रव्यानुयोगी देवचंद्रजी, उपाध्याय यशोविजयजी आदि साहित्य सर्जकों के नाम आज तक श्रद्धा से स्मरण किये जा रहे हैं । इसी विद्वद्वरेण्यों की नामावली में पाठक प्रवर महोपाध्याय क्षमाकल्याण जी म. का प्रतिष्ठित स्थान हैं ।

जन्म दीक्षा

बीकानेर के समीपवर्ती गाँव केसरदेसर के ओसवाल वंशीय मालु गौत्र में विक्रम संवत् 1801 में आपका जन्म हुआ । जन्म का नाम खुशालचन्द था । विक्रम संवत् 1812 में ग्यारह वर्ष की लघुवय में खरतरगच्छाधिपति आचार्य श्री जिनलाभसूरिजी म. के विजयी राज्य में वाचक श्री अमृतधर्मजी महाराज के निकट दीक्षा का कठोर-मार्ग स्वीकार किया ।

जिस परम्परा में आपने कंटकाकीर्ण साधना मार्ग अंगीकार किया, वह सुविहित या विधिमार्गी परम्परा के रूप में शताब्दियों से जैन समाज में ही नहीं अपितु विद्वद् समाज में भी सुविख्यात रही है। जैन साहित्य के विकास एवं संरक्षण में इस सुविहित मार्ग के अनुसरण करने वालों का बहुत बड़ा अवदान रहा है ।

आपका दीक्षाकुल जितना उज्जवल एवं प्रेरणाप्रद था, विद्याकुल भी उतना ही विद्वद्वरेण्य था। पूज्य श्री राजसोमजी महाराज जैसे प्रतिभासम्पन्न विद्वान् मुनि के श्रीचरणों में बैठ कर सिद्धान्त, न्याय और साहित्यादि विषयों का ज्ञानार्जन किया एवं उपाध्याय श्री रामविजयजी महाराज के निकट काव्य, छंद, अलंकार आदि विषयों में पारंगत बनकर शास्त्रों के गूढ रहस्यों का अवगाहन किया । परिणामस्वरूप शासन और संस्कृति के उत्तरदायित्व को आपश्री ने अल्पवय में ही भलीभाँति समझ लिया ।

महोपाध्यायजी प्रौढ़ विद्वान् एवं उच्चकोटि के कवि थे । 45 वर्षों तक निरंतर साहित्योपासना के द्वारा महोपाध्यायजी को साहित्यकारों में विशिष्ट स्थान प्राप्त है ।

महोपाध्याय क्षमाकल्याण जी म. द्वारा रचित साहित्य का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है — सर्वप्रथम वि.सं.1829 में **भूधातु** पर विस्तृत विवेचन कर सूक्ष्म मेधा का परिचय सतीर्थियों को कराया ।

शास्त्र चर्चा

महोपाध्यायजी शास्त्रों के रसिक एवं ज्ञाता थे । इस कारण शास्त्र चर्चा व शास्त्रार्थ-शक्ति के नैसर्गिक गुण ने प्रकट होकर, विविध स्थानों पर अपना पूर्ण रंग दिखाया । क्षमाकल्याण चरित्र के रचयिता पंडित नित्यानंद शास्त्री ने इस संदर्भ में लिखा है कि

निर्मर्षणः सिंह इवोन्मुखः क्षमा, कल्याणकः संस्कृत-गर्जितं दधत् ।
उद्दण्डशुण्डार-मिवाशु पण्डितं, सम्यग् विजिग्येऽस्खलितोरुयुक्तिभिः ॥ 16 ॥

अर्थात् 'श्री क्षमाकल्याण जी महाराज संस्कृत में सिंह के समान गर्जना करते हुए प्रतिपक्षी पंडित को इस प्रकार पराजित किया करते थे जैसे कोई दहाड़ता हुआ सिंह, उद्दंड सुण्ड वाले हाथी को तत्काल पछाड़ देता है ।'

उपाध्यायजी का सैद्धान्तिक ज्ञान इतना गम्भीर और व्यापक था कि जटिल प्रश्नों के उत्तर देने में वे कभी नहीं हिचके । गच्छ के प्रतिष्ठित आचार्य भी उनकी सैद्धान्तिक सम्मति को बहुत महत्त्व देते थे । अन्य गच्छ के विशिष्ट विद्वान् भी उनकी सम्मति को बहुत ही आदर व श्रद्धा की दृष्टि से मानते थे।

चर्चा ग्रंथों में प्रश्नोत्तर सार्धशतक, प्रश्नोत्तर शतक आदि प्रमुख हैं । जिनमें आगम पाठ, चूर्णी, वृत्ति, निर्युक्ति के उद्धरणों के द्वारा अनेक जिज्ञासाओं का शास्त्रीय उत्तर प्रदान किया गया है ।

चरित्र ग्रंथ निर्माण

श्री क्षमाकल्याण जी महाराज का संस्कृत-भाषा पर स्पृहणीय अधिकार था ।

पाठक प्रवर श्री रूपचंद्रजी गणि विरचित गौतमीय काव्यम् पर वि.सं.1852 में गौतमीयप्रकाश नामक विशद व्याख्या में जैन धर्म की मूल मान्यताओं का उल्लेख करते हुए बौद्ध, वेदांत एवं न्यायादि दर्शनों का जिस तरह खंडन किया हैं, उससे वृत्तिकार के प्रकांड पांडित्य का ज्ञान होता है ।

यशोधर चरित्र

इस कृति में अपने पुत्र को माता द्वारा मुर्गे का मांस खिलाने से हुए पाप का प्रायश्चित करते हुए यशोधर के 10 भवों का वर्णन किया है । चरित्र में कथा का सरल व सरस प्रवाह कई स्थानों पर अलंकारिक बनकर पाठक को बाँधे रखता है । इसका रचना संवत् 1839 है ।

समरादित्य चरित्र

जीवन के उत्तरार्ध में वि.सं.1872 में समरादित्य चरित्र का लेखन प्रारंभ किया था । अस्वस्थता के बीच भी साहित्य रचना का अनवरत कार्य आपकी श्रुतभक्ति को प्रदर्शित करता है । इस चरित्र के

निर्माण के मध्य में ही महोपाध्यायजी का स्वर्गवास हो गया था। बाद में वि.सं.1874 में विनीतसुंदर गणि के शिष्य सुमतिवर्धन गणि, जिन्होंने पाठक प्रवर से विद्यार्जन किया, ने इस चरित्र को पूर्ण किया।

व्याख्यान साहित्य

महोपाध्यायजी ने विविध धार्मिक पर्वों का महत्त्व बताने वाले व्याख्यान साहित्य की रचना कर हलुकर्मियों के लिये सरल मार्ग का प्रदर्शन किया है। इनमें पर्युषणा, होलिका, मेरु त्रयोदशी, पौष दशमी, मौन एकादशी, चौमासी आदि प्रमुख हैं। संस्कृत भाषा में निबद्ध इन व्याख्यानों में अनेक प्राचीन गाथाएँ उद्धृत कर कथाओं को सरलता के साथ रुचिपूर्ण बनाया है।

श्रीपाल कथा अवचूर्णी

श्री रत्नशेखरसूरि कृत प्राकृत भाषामय 'सिरिवाल कहा' ग्रंथ पर महोपाध्यायजी द्वारा लिखित अवचूर्णी प्राप्त होती है। खंडान्वय पद्धति से निर्मित इस कृति में पाठ के प्रत्येक पद का सक्षम पर्यायवाची शब्द का प्रयोग कर अनेक स्थलों पर लोकोक्तियों को भी शामिल किया है। यथा–

'पानीयं पीत्वा किल पश्चाद् गृहं पृच्छ्यते'
'दग्धानामुपरि स्फोटकदानक्रिया किं करोषि'
'पित्तं यदि शर्करया सितोपलया शाम्यति तर्हि पटोलया कोशितक्या क्षारवल्या किम्'।

साथ ही मारुगुर्जर भाषा में वि.सं.1854 में लिखित अंबड चरित्र भी प्राप्त होता है।

विधि ग्रंथ

संस्कृत भाषामय साधु विधि प्रकाश और मारुगुर्जर भाषा में लिखित श्रावक विधि प्रकाश, श्राद्ध आलोचन विधि, प्रायश्चित विधि, द्वादश व्रत टिप्पनक, प्रतिक्रमण हेतु विचार आदि कृतियाँ आपकी क्रियाशीलता को उजागर करती हैं। इन ग्रंथों में साधु एवं श्रावक योग्य दैनिक क्रियाओं का सप्रमाण विवेचन करते हुए क्रियाओं का सुयोग्य क्रम लिखा है।

न्याय ग्रंथ

श्री अन्नंभट्ट के सुप्रसिद्ध तर्क संग्रह ग्रंथ पर आपने फक्किका का निर्माण कर लक्षणों को खंडान्वय रीति से सरल भाषा में सुलझाने का सफल प्रयत्न किया है। इसी तरह न्यायसिद्धांतमुक्तावली ग्रंथ पर मुक्तावली फक्किका का निर्माण भी साहित्य सूची पत्र में प्राप्त होता है, यह ग्रंथ ज्ञानभंडारों में अन्वेषणीय है।

भक्ति साहित्य

त्रैलोक्य प्रकाश नामक कृति में वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों की संस्कृत भाषा में स्तुति की रचना विविध छंदों में गुंथकर भक्त हृदय के भावों की अनुपम प्रस्तुति दी है। जिसमें भाषा सौष्ठव एवं पद लालित्य के साथ उच्च कोटि की पदयुक्तियाँ समाहित हैं।

जैन तीर्थावली द्वात्रिंशिका नामक कृति में तीर्थों की नामोल्लेखपूर्वक स्तुति करते हुए वंदना की गई है । श्लोक संख्या 24-25 में वंदनीय चैत्य के बारे में स्पष्टता करते हुए लिखा है – शुद्ध आचार्य भगवंत के द्वारा प्रतिष्ठित हो, गुह्य भाग न दिखे वैसी सुंदर आकृति युक्त प्रतिमा हो, मिथ्यादृष्टियों का उस पर अधिकार न हो, साथ ही सम्यग्दृष्टियों के द्वारा भावपूर्वक उनकी स्तवना की जाती हो, ऐसे अर्हत् चैत्यों को मैं यहाँ रहते हुए भावपूर्वक वंदना करता हूँ ।

इसके अतिरिक्त मौन एकादशी स्तुति सटीक, दादा गुरुदेव की उपकार स्मृति स्वरूप स्तोत्र, गुरु भगवंतों की भक्ति प्रकटीकरण अष्टक आदि कृतज्ञता भावों को प्रकाशित करते हैं ।

तात्कालिक सामन्तवादी युग में भी साधनाशील व्यक्तित्व के कारण ही वे राजा महाराजाओं तक को प्रभावित करने में सफल रहे । जैसलमेर के रावल मूलराज तो आपसे इतने प्रभावित थे और इतनी निकटता रखते थे, कि जिसके फलस्वरूप उनके लिये आपने विज्ञानचंद्रिका नामक स्वतन्त्र ग्रंथ बनाया था ।

संयम की साधना व जिनशासन प्रभावना आपकी अन्तश्चेतना के प्रतीक थे, तो अतीत के प्रति भी आप जागरूक थे । उज्ज्वल अतीत को आपने खरतरगच्छ पट्टावली के रूप में लिपिबद्ध कर इतिहास विषयक ज्ञान का भी परिचय दिया है । जिसमें अनेक समुचित कारणों का उल्लेख कर पूर्वाचार्यों के प्रति अपनी भावांजलि प्रकट की है ।

गेय साहित्य

जिनागमों के तथ्यों को जनसामान्य में प्रचार करने के लिए पूर्व समय में प्रबंध, चोपाई, सज्झाय, विनती, पद, चोढालिया, विवाहलो आदि प्रचलित थे । महोपाध्यायजी ने जीवन काल में थावच्चापुत्र अणगार चोढालिया, अइमत्ता सज्झाय, सुदर्शन सेठ सज्झाय, जिनाज्ञा सज्झाय, भगवती सूत्र सज्झाय, गुरुवंदन के बत्तीस दोष की सज्झाय, स्थूलिभद्र स्थापना गीत, हितशिक्षा बत्तीसी सहित अनेक उपदेशक गीतों का निर्माण किया है । जिसमें महापुरुषों के जीवन की अनेक ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन हैं।

शताधिक परमात्म भक्ति स्तवन, चैत्यवंदन भी उपलब्ध हैं जिनसे आपकी विहार यात्रा, अनेक नगरों में हुई प्रतिष्ठा व तीर्थ यात्राओं का वर्णन आदि अनेक सूचनाओं का ज्ञान होता है ।

महोपाध्यायजी ने बीकानेर में ज्ञानभंडार की स्थापना भी की थी जो संप्रति वृहद् ज्ञान भंडार बीकानेर में सरंक्षित है ।

पाठकप्रवर का विचरण क्षेत्र राजस्थान, गुजरात, बंगाल, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश आदि में प्रमुखता से हुआ ।

वर्तमान में खरतरगच्छीय साधु–साध्वीजी भगवंत जिस वासक्षेप चूर्ण का उपयोग करते हैं, उसे संपूर्ण विधि–विधान के साथ पाठकप्रवर ने ही अभिमंत्रित किया था । वही वासचूर्ण गुरुपरंपरानुसार आज

तक दीक्षा, बडी दीक्षा, योगोद्वहन, पदारोहण आदि प्रत्येक विधि-विधान में आपका नाम लेकर निक्षेप किया जाता है। ऐसा उदाहरण समग्र जिनशासन में विरल ही है।

महोपाध्यायजी का स्वर्गवास बीकानेर में वि.सं.1873 पौष वदि 14 को हुआ था। इस वर्ष पौष वदि 14 बुधवार ता.28 दिसम्बर 2016 को उनके स्वर्गवास के दो सौ वर्ष पूरे हुये। दुर्ग नगर में अ.भा.खरतरगच्छ युवा परिषद् के अधिवेशन में खरतरगच्छाधिपति श्री जिनमणिप्रभसूरिजी महाराज द्वारा की गई घोषणानुसार पूरे भारत में विविध जिनभक्ति व गुणानुवाद के कार्य किये गये।

आपके द्वारा रचित अनेक रचनाएँ अद्यावधि अप्रकाशित हैं। अद्यावधि प्राप्य समग्र 180 कृतियों में से 121 लघुकृतियों का संकलन मेरे द्वारा किया गया हैं।

महोपाध्यायजी के स्वर्गारोहण द्विशताब्दी के अवसर पर उनके पवित्र चरणों में भावों के सुंदर सुमनों की अंजलियाँ सादर समर्पित हैं।

❀ ❀ ❀